UGC Approved Journal
- Research Link

Since March 2002

An International, Registered & Referred Monthly Journal : Sanskrit Literature
Research Link - 160, Vol - XVI (5), July - 2017, Page No. 46-48
ISSN - 0973-1628 ■ RNI - MPHIN-2002-7041 ■ Impact Factor - 2015 - 2.782

भोगवादी प्रवृत्ति से नष्ट होता गंगा का प्रवाह और पवित्रता : एक अध्ययन

प्रस्तुत शोधपत्र में भारत की जीवनदायिनी पवित्र और पावन नदी गंगा की नष्ट होती पवित्रता और मनुष्य की भोगवादी प्रवृत्ति का अध्ययन किया गया है। हम भारतवासी हैं और भारतवासियों की सभ्यता और संस्कृति में भोग और योग का सुन्दर समन्वय है। इसी कारण हमारी भारतीय संस्कृति महान संस्कृति मानी जाती है। हमारे उपनिषदों में भारतीय संस्कृति और सभ्यता के यथार्थ रुप के दर्शन होते हैं। कठोपनिषद में यम-नचिकेता संवाद के अवसर पर नचिकेता का कथन हमारी इसी महान संस्कृति की ओर संकेत करता है। नचिकेता ने कहा था, मात्र धन का उपभोग मानव को वास्तविक सुख नहीं दे सकता और जो दुनिया के भोग विलास हैं। मात्र उनको नचिकेता सुखी मानव जीवन का साधन नहीं समझता। हम भारतीय संस्कृति की जवन पद्धति पर चलेंगे, तभी हम अपनी मातृस्वरुप गंगा नदी के जीवनोद्धार में महान योगदान कर पायेंगे और तभी एक दिन गंगा अपने वास्तविक स्वरुप में शोभायमान हो पाएगी।

डॉ.सरिता बहुगुणा

गमनार्थक गम् धातु से उणादिक गन् प्रत्यय करने पर गंगा शब्द की निष्पत्ति होती है। गंगा शब्द का अर्थ है, निरन्त गतिशीलता, निरन्त प्रवाह का नाम ही गंगा है। गंगा नदी को सुरसरि, विष्णुप्रिया, भागीरथी, जाह्नवी, विष्णुपदी, त्रिपथगा, भगीरथसुता, जह्नुतनया, देवनदी आदि अनेक नामों से जाना जाता है। यह गंगा की दिव्यता, पावनता और निरन्तर गतिशीलता का ही प्रभाव है कि गंगा न केवल भारत में अपितु समस्त विश्व में सबसे श्रेष्ठ नदी है। गंगा नदी की महिमा न केवल हिन्दू धर्मावलम्बी गाते हैं, अपितु अन्य अनेक धर्मावलम्बी भी सुरसरि की कीर्ति का बखान करते हैं। गंगा जैसी दूसरी नदी नहीं है। अतः गंगा नदीतमा है, सर्वोपरि है, सर्वमान्या है। यह देवनदी गंगा की ही महिमा है कि इसे सबसे बड़ा तीर्थ माना जाता है :

न गंगा सदृशं तीर्थम्। (1)

और शास्त्रों में ऐसा माना जाता है कि कलियुग में सब तीर्थ लुप्त होकर गंगा में समाहित हो जाते हैं :

तिस्रः कोटयोर्ध कोटी चतीर्थानां वायु रब्रवीत्
दिवि भूम्यन्तरिक्षे च तत्सर्वं जाह्नवी जले।। (2)

वायु देवता ने ऋषियों को सुनाया है कि तीनों लोकों में तीर्थों की संख्या साढ़े तीन करोड़ है। यह सब तीर्थ कलियुग में गंगा में आ जाते हैं।

कलियुग में गंगा को ही तीर्थ माना जाता है।

सर्वं कृतयुगे तीर्थं त्रेतायां पुष्करं स्मृतम्।
द्वापरे नैमिषारण्यं कलौ गंगैंव केवलम्।। (3)

सत्युग में सभी तीर्थ हैं। त्रेतायुग में पुष्कर तीर्थ माना गया है। द्वापर में नैमिषारण्य तीर्थ माना गया है। कलियुग में केवल गंगा ही तीर्थ है। गर्ग संहिता में 'गंगा' का गान इस प्रकार किया गया है :

हे गंगे त्वं वु धन्यासि
सर्वब्रह्माण्ड पावनी
कृष्णपादाब्ज संभूता
सर्वलोकैक वन्दिता।।
'सर्व तीर्थात्मिके गंगे' / तस्मात्वां प्रणमाम्यहम् (4)

यह विडंबना ही है कि आज हमने आचार और व्यवहार से इस सुरनदी की पवित्रता और प्रवाह को नष्ट करने में कोई कसर नहीं छोड़ी है। अपने उद्गमस्थल गोमुख से गंगा सागर तक जहाँ पर यह देवनदी सागर में मिल जाती है, वहाँ तक हमने इसके रूप को विकृत ही किया है। गंगा नदी हमारी पौराणिक आर्यसंस्कृति की परम पावन धरोहर है, किन्तु आज हम इसके महत्व को नकार रहे हैं, यदि ऐसा न होता तो आज गंगा की जो वर्तमान स्थिति है वह न होती। जिस पावन दिव्य गंगा नदी का सैकड़ों योजन दूरी से किया गया मात्र नामोच्चारण ही मनुष्यों को पापमुक्त कर देता है :

गंगा गंगेति यो ब्रूयात् योजनानां शतैरपि।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति।। (5)

उस पावन 'सुरसरि के जल को हमने आज आचमन करने योग्य भी नहीं छोड़ा है। इसे हम सांसारिक भोगप्रियता की अति नहीं तो और क्या कहेंगे?

पूर्व काल में गंगा के तट तपोस्थली होते थे। गोमुख से गंगा सागर तक गंगा नदी के तटवर्ती तीर्थ इस बात के प्रमाण हैं। सुरसरि कभी अपनी पावनता प्रवाह और दिव्यता से हम भारतीयों में ही नहीं अपितु विदेशियों में भी दिव्य एवं पावन चेतना का संचार करती थी। गंगा नदी के इस महत्व को समझते हुए ही हमारे ऋषि मुनि इस नदी के तटों पर साधनारत रहते थे और हमारे देश के राजा–

सहायक प्राध्यापक (संस्कृत विभाग), बालगंगा महाविद्यालय, सेन्दुल (केमर), टिहरी गढ़वाल (उत्तराखण्ड)

महाराजा इस पावन नदी के तटों पर बड़े–बड़े यज्ञ सम्पन्न करते थे। दान आदि परोपकार के कार्य किया करते थे। कन्नौज के राजा हर्षवर्धन कुम्भ पर्व पर गंगा–यमुना तथा सरस्वती के पावन संगम प्रयागराज में अपना सम्पूर्ण राजकोष दान कर देते थे :

कान्यकुब्जेश्वरः कुम्भ योगे पुरा
राजकोषं ददौ नैकबारं मुदा। (6)

कुम्भ पर्व पर इस संगम पर दान आदि कर्मों को करने से शीघ्र ही मनुष्य के सारे दोष समाप्त हो जाते हैं :

पुण्यकालेऽमृते स्नानदानादिना
सत्त्वरं दोषंजातं विनष्टं भवेत। (7)

किन्तु गंगा के तट आज पहले जैसी स्थिति में नही रहे। हमारी भोगवादी प्रवृत्ति ने आज इस सुरसरि को सबसे अधिक हानि पहुँचायी है। आज गोमुख से गंगा सागर तक 'गंगा' हमारी भोगवादी सभ्यता से त्रस्त है। यह हमारी भोगवादी सभ्यता का ही परिणाम है कि आज गंगा की पावनता और प्रवाह पहले जैसे नहीं रहा। गंगा तटों पर बड़े–बड़े आलीशान होटल और रेस्तराओं का निर्माण होना हमारी भोगवादी प्रवृत्ति के ही परिचायक हैं।

आज हम भारतवासी अपनी भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति में ही लगे हुए हैं। अतएव हमारे जनप्रतिनिधिगण, विभिन्न विभागों के अधिकारीगण, तकनीशियन, बड़े–बड़े उद्योगपति, ठेकेदार आदि सभी इस भोगवादी सभ्यता के विस्तार में ही लगे हुए हैं। इसीलिए हमारी सरकारी नीतियाँ भी इसी प्रवृत्ति की पूर्ति के लिए बनती हैं। इस सम्बन्ध में प्रसिद्ध पर्यावरणविद् श्री सुन्दरलाल जी का प्रस्तुत वक्तव्य द्रष्टव्य है, ''भोगवादी सभ्यता की बुनियाद पर आधारित नीतियों ने गम्भीर रूप से घायल हिमालय के घावों को भरने के बजाय उसी जल, जंगल और खनिज सम्पदाओं के शोषण करने की गति को तीव्र कर दिया है।''(8)

हमारे देश की विशाल जन संख्या की सुख–सुविधाओं की पूर्ति के लिये गंगा तथा उसकी सहायक छोटी– बड़ी नदियों को स्थान–स्थान पर बांध बनाकर विद्युत उत्पादन किया जा रहा है। टिहरी में भिलंगना और भागीरथी नदी के संगम पर बना विशाल टिहरी बांध हमारी इस आसुरी प्रवृत्ति का सबसे बड़ा उदाहरण है। इस विशाल बांध ने हमारी 'देवनदी' को बहुत हानि पहुँचायी है। इसके कारण गंगा का जल अत्यन्त दूषित तो हुआ ही है, साथ ही उसके प्रवाह में भी कमी आयी है। निरस्तर प्रवाह का नाम ही 'गंगा' है। जब इस नदी में पहले जैसा प्रवाह ही नहीं रहा तो यह 'सुरसरि' 'गंगा' रही ही कहाँ। टिहरी झील के सम्बन्ध में एडवोकेट विरेन्द्र सकलानी जी ने अपना एक आलेख प्रस्तुत किया था, वह चौंकाने वाला है उसका सार में यहाँ प्रस्तुत कर रही हूँ– ''जब किसी नदी का प्राकृतिक प्रवाह रोक दिया जाता है और पानी बांध के पीछे एक बड़ी झील में जमा हो जाता है, जिसमें नदियों द्वारा बहायी गयी गन्दगी तो मिलती ही जिससे पानी अत्यन्त दूषित हो जाता है। साथ ही पानी की गुणवत्ता पर भी इसका भारी कुप्रभाव पड़ता है। इससे पानी बीमार हो जाता है। यह पानी वास्तव में कैन्सरस हो जाता है और कैन्सर का कारण बन जाता है और यह बीमारी फैलकर जलागम क्षेत्र तक पहुँच जाती है।''(9)

यद्यपि 'गंगा' नदी का जल अनेक प्रकार के प्रदूषणों को समाप्त करने वाला है, किन्तु गंगा नदी के इस महान गुण को हमारी भोगवादिता ने बचाया ही कहाँ है। हमने तो जीती–जागती नदी को प्राणहीन कर दिया है। अपने इस अक्षम्य अपराध के लिए विष्णुपदी–भागीरथी हमें कभी क्षमा नहीं करेगी। बांधों से तो हमारी नदियाँ प्रभावित हुई है, साथ ही विशाल जनसंख्या वाले इस देश के लोगों की नाना आवश्यकताओं की पूर्ति एवं सुख–सुविधाओं की पूर्ति के लिए बहुत अधिक जंगल काटे जा रहे हैं और अधिकांश क्षेत्रों में नदियों के अत्यन्त निकट नगरों तथा कस्बों का विस्तार हो रहा है और सीमेंट के जंगल तैयार किए जा रहे हैं। इसके कारण भी हमारी यह पवित्र नदी अत्यन्त दूषित हो गयी है। मैंने स्वयं यह देखा कि गंगा नदी एवं उसमें मिलने वाले सहायक नदियों को किस प्रकार हमारी आतिभोगवादिता के दुष्परिणामों से दूषित किया जा रहा है। नदियों, गदेरों जल धाराओं के समीप जहां–जहां ग्राम, कस्बे तथा नगर हैं, किस तरह उन्हें कूड़ाघर बनाया जा रहा है, जिसमें कई टन प्लास्टिक, कचरा तथा अन्य जैविक तथा अजैविक कूड़े के अम्बार लगे होते हैं और यह कूड़ा धीरे–धीरे जल के इन स्रोतों में फैलता रहता है। इस तरह हमारी गंगा तथा उसकी सहायक नदियाँ आज पूजा स्थल न बनकर कूड़ा स्थल बन गयी हैं। हम मनुष्यों की प्रकृति के प्रति इससे अधिक संवेदनहीनता और क्या होगी?

आज हमारी नदियों के तटों का उपयोग साधना के लिए तो बहुत कम किया जाता है, अपितु ज्यादातर मौज मस्ती के लिए किया जाता है। हमारी पर्यटन नीति भी गंगा नदी के हित में नहीं है। नव भारत टाइम्स का यह आलेक इसी बात की और संकेत कर रहा है – '' हमारी भोगवादी सभ्यता का विस्तार गंगोत्री जैसे दूरस्थ क्षेत्रों तक हो गया है। सरकार मौज–मजे के लिए पर्यटन को बढ़ावा देने के लिये साधनों की व्यवस्था कर उसमें तेजी ला रही है। गंगोत्री से प्रकृति दूर भाग रही है। वहाँ पर जिसके दर्शन होते हैं, वह विकृति है, जो तेजी से बनने वाली भौंडी सीमेन्ट की इमारतों के रूम में चारों और खड़ी है।''(10)

जीवन जीने की हमारी भोगवादी प्रवृत्ति ने 'गंगा' नदी को बहुत हानि पहुँचायी है। मैं इस सम्बन्ध में प्रख्यात् पर्यावरण विद् श्री सुन्दरलाल बहुगुणा जी के वक्तव्य को प्रस्तु कर रही हूँ, ''ऐसे समाज में, जहां अर्थ ही धर्म बन गया है, इक्के–दुक्के प्रयास तब तक सफल नहीं हो सकते, जब तक विकास की सम्पूर्ण संकल्पना को बदला नहीं जाता। हमने विकास की ऐसी पद्धति की नकल की है, जिसमें प्रकृति एक वस्तु है, जिसे खरीदा और बेचा जा सकता है और समाज केवल मनुष्यों का है, जो मिथ्या धारणाओं पर आधारित है। विकास की ऐसी पद्धति पश्चिमी देशों में जन्मी और विकसित हुई, जहाँ सरकारों के पास शोषण के लिए उपनिवेश थे। जनसंख्या कम है और क्षेत्रफल ज्यादा है। घनी आबादी वाले देशों में इस प्रणाली को अपनाने से अनेक समस्याएँ उत्पन्न हो गयी और उनमें से एक गंगा का संकट है।''(11)

पानी का अत्यधिक उपयोग दिन–प्रतिदिन भोगवादी प्रवृत्ति के कारण बढ़ता जा रहा है और गंगा नदी को दूषित करने का यह एक बड़ा कारण बन गया है, जिसके कारण यह सुरसरि जीवनी शक्ति से रहित हो रही है। अमर उजाला का यह आलेख इसी बात की ओर हमार ध्यान आकृष्ट कर रहा है, ''अगर हम जल की गन्दगी से बचना चाहते हैं, तो हमें अपने सामाजिक व्यवहार में एक आदत लानी होगी कि हम जल के उपयोग में हर तरह की मितव्ययता

बरतें। जल उपयोग में जितनी मितव्ययता होगी उतना कम पानी खुले बहावों में व सीवर लाइनों में बहेगा जल को कम खर्च करना और नदियों को मैला होने से बचाना। अंत में एक ही लक्ष्य की और ले जाते हैं।''[12]

अन्त में निष्कर्ष स्वरूप यह कहा जा सकता है कि हम भारतवासी हैं और हम भारतवासियों की सभ्यता और संस्कृति में भोग और योग का सुन्दर समन्वय है और इसी कारण हमारी भारतीय संस्कृति एक महान संस्कृति मानी जाती है। हमारे उपनिषदों में भारतीय संस्कृति और सभ्यता के यथार्थ रूप के दर्शन होते हैं। कठोपनिषद में यमनचिकेता संवाद के अवसर पर नचिकेता का प्रस्तुत कथन हमारी इसी महान संस्कृति की और संकेत करता हैः

''न वित्तेन तर्पणीयो मनुष्यो।'' [13]

मात्र धन का उपभोग मानव को वास्तविक सुख नहीं दे सकता और जो दुनिया के भोग विलास हैं। मात्र उनको नचिकेता सुखी मानव जीवन का साधन नहीं समझता।

भवोभावा मर्त्यस्य यदन्तकैव
तत्सर्वेन्द्रियाणां जरयन्ति तेजः।
अपि सर्वं जीवितमल्पमेव
तवैव वाहास्तव नृत्यगीते'' [14]

इसी प्रकार 'ईसापास्योपनिषद्' भी योग और भोग के सुन्दर समन्वय में ही मानव जीवन की सार्थकता मानता है –

विद्यां चाविद्यां च यस्तद् वेदोभयं सह।
अविद्याया मृत्युं तीर्त्व विद्ययाऽमृत नुते।। [15]

अर्थात् जो मनुष्य विद्या अर्थात् ज्ञान के परम तत्त्व तथा अवद्या अर्थात् कर्म के व्यापक तत्व को साथ–साथ भली प्रकार अपने हृदय में बैठा लेता है, वह व्यक्ति कर्मों की उपासना से परब्रह्मा परमात्मा के व्यापक स्वरूप को प्रत्यक्ष प्राप्त कर लेता है।

इस प्रकार यदि हम भारतीय संस्कृति की जीवन पद्धति पर चलेंगे तभी हम अपनी मातृस्वरूप गंगा नदी के जीवनोद्धार में एक महान् योगदान कर पायेंगे और तब मैं उम्मीद कर सकती हूँ कि एक दिन सुरसरि अपने वास्तविक स्वरूप से भाोभायमान हो पाएगी।

सन्दर्भ :

(1) शास्त्री सूरत राम : योगसम्मुच्चय, उत्तरकाशी, पृ0 96.

(2) *शास्त्री सूरत राम : योगसम्मुच्चय, उत्तरकाशी, पृ0 94.*

(3) *शास्त्री सूरत राम : योगसम्मुच्चय, उत्तरकाशी, पृ0 96.*

(4) *शास्त्री सूरत राम : योगसम्मुच्चय, उत्तरकाशी, पृ0 79.*

(5) *गंगा : एक गद्य संग्रह, त्रिरत्न न्यास सारनाथ, वाराणसी – 221007, पृ0 03.*

(6) *पाण्डेय, डॉ0 कमला (1999) : रक्षत् गंगाम् (गंगा–सप्तशती) श्रीमाता प्रकाशन, वाराणसी, पृ0 92.*

(7) *पाण्डेय, डॉ0 कमला (1999) : रक्षत् गंगाम् (गंगा–सप्तशती) श्रीमाता प्रकाशन, वाराणसी, पृ0 92.*

(8) *हिमालय बचाओ आन्दोलन, टिहरी का घोषणा पत्र, पृ0 01.*

(9) *सकलानी, वीरेन्द्र दत्त : आजादी के सिपाही की कहानी अपनी जुबानी, 25 अप्रैल 1980, चिपको सूचना केन्द्र प0न0म0 आश्रम सिल्यारा, टि0ग0, पृ0 23–25.*

(10) *नव भारत टाइम्स, 18 जून 1994, पिंगलवाड़ा अमृतसर प्रकाशन, पृ0 48.*

(11) *बहुगुणा, लाल सुन्दर : गंगा बचाओं अभियान, गंगा हिमालय कुटी टिहरी, टिहरी गढ़वाल, पृ0 45.*

(12) *पैन्यूली, कुमार वीरेन्द्र : पर्यावरण कार्यकर्ता, दै0 हिन्दुस्तान 31.05.2017, पृ0 10.*

(13) *कठोपनिषद् – 1/1/24, गीताप्रेस गोरखपुर, 273005, पृ0 40.*

(14) *कठोपनिषद् – 1/1/26, गीता प्रेस, गोरखपुर, 273005, पृ0 39.*

(15) *पाण्डेय, डॉ0 वाचस्पति (व्याख्याकार) : ईशावास्योपनिषद्, साहित्य भण्डार, मेरठ – 250002.*

❁❁